कृति -का

चैप्टर - 4

पेज-37
सुबहें कृतिका के लिए एक तरह का पैगाम लेकर आतीं, हर बार कोई नया अलग-सा पैगाम, कई सुबहें, जो अकेली कही जाने वाली सुबहें होती उसकी नींद खुलती तो पूरे कमरे क्या, पूरे घर में कोई न होता, जुड़े हुए पांच-छै बड़े कमरों वाले बंगले की सभी दीवारों के बीच वह अकेली होती .

.
कई बार ऐसी अकेली सुबहों के आने से पहले वाले घंटों में कृति की आँखें अपने आप खुल जातीं, उस समय भोर का धुंधलका भी न छंटा होता, रात्रि के बीतते पगों को महसूसती वह सोने के कमरे से निकल कर बगल के कमरे में आ खड़ी होती, दाहिनी ओर की दीवार के माथे पर टिके अधखुले रोशनदान के पार नीम के पेड़ की फुनगी हिलती हुई दिख पड़ती. कृतिका बीच के कमरे से गुजरकर ड्राइंगरूम में आ जाती.

रात के बीत रहे प्रहर के साक्षी रूप में स्थित सजे-धजे उस भव्य कमरे की आकृति उसे मोह लेती. सोफे पर मढ़ी हुई लाल मखमली किरण कश्मीरी कालीन के लाल बूटों से जा टकराती. पर्दों की सुनहली ताब में लिपटी टेपेस्ट्र की मोटी सलवटें बड़े शालीन ढंग से कंधों को झुकाए खड़ी दिखतीं.
कमरे की गंध में लिपटा मौन आगे बढ़कर कृतिका को चारों ओर से घेर लेता, वह सजाए गए गमलों में पौधों और एक-एक सजावटी आइटम पर नजरें फिराती, मुग्धता का यह आलम आने वाली भोर की अगवानी करता हुआ प्रतीत होता, तभी खाने वाले कमरे को अलग करने वाले पाटीशन पर लगे लेस के पर्दों की मोतियां ताब, हवा की लहर पर पिछले बरामदे से
आने वाली सुथरी हवा की गंध के संग सभी कमरों के रोशनदानों तक फैल जाती.

कृतिका का मौन उसके लाइटी के झालर उसे सिमटा जाता और वह बाहरी दरवाजे के दुहरेपन को एक-एक करके खोल डालती. मध्य में लगे लैब को वह पहले हटाती,

पेज-38
फिर लम्बी चिटखनी को बाईं ओर को घुमाकर सीधा करती और नीचे लाकर छोड़ देती.
दरवाजे की पहली तह बीचोंबीच से खुल पड़ती, जालीदार दरवाजे के पल्ले बाहर बरामदे की ओर खुलते,
कृति स्वयं को दरवाजों के दुहरेपन के बीच से होकर बाहर निकलते हुए देखती, बाहर निकलते ही लाल फर्शवाला गोलाई में घुमा हुआ बरामदा मानों चैंक पड़ता. गेट के करीब सोया हुआ चैकीदार हड़बड़ाकर उठ खड़ा होता, लाठी हाथ में पकड़ लेता. भोर का धुंधलका आगे बढ़कर चुप की चादर तले सिमटे बरामदे पर फैल जाता.

नीचे पोर्टिको के चैकोर खम्भों के बीच अंधेरा लुका छिपा-सा खड़ा रहता. दिन में देखे गये लैंडस्केप पर छाया हुए पारदर्शी रहस्यमता को कृति मुग्ध होकर निहारती. वह बरामदे की सीढ़ियां उतरकर पोर्टिको के सीमेंटी फर्श पर जा खड़ी होती और वहां से आगे बढ़कर बाग की ओर उन्मुख अर्द्धवृत्ताकार चबूतरे पर. तभी हवा के हल्के

झोंके से सफेद बोगनवेलिया की पुष्पित डाल उसके कंधों तक झुक आने की कोशिश करती, मुस्कुराहट की परत नरमी से उस को छू लेती.
वह फेंसिंग के पार हीलियम की रोशनी में चमकती सड़क की चिकनी पीठ पर छाए सन्नाटे को देखती. सड़क का आलस निद्रित भाव उसे मोह लेता.

कृति के अन्दर वातावरण की निस्तबधता अपने को उड़ेल देती. वहां शून्यता नहीं दिखती बस निस्तबधता उन क्षणों में उसके करीब आ जाती, भोर के वे क्षण अचानक स्वर्गिक सुख से भर उठते, भोर होने के ठीक पहले कृतिका को नैनीताल में भोरकुवा तारे के उगने के पहले देखे गए पहाड़ों की याद आती, उन्नत हरियाले शिखरों के झिलमिलाते विश्व और दाहिनी और दूरी पर खड़ा नैना देवी का मंदिर.
कई सुबहों में कृति सैर के लिए निकल जाती. यह ज्यादातर ढलान के सिरे पर स्थित सामने वाली सड़क पर

खिलती भोर के संग चलना पसंद करती. बाएं मुड़ते ही दृश्य के अंदर वर्ष की बिल्डिंग को अनदेखा करता हुआ एक स्वरूप बोध आ पैठता. सीधी दिखती सड़क आगे बढ़ती-बढ़ती मानो उगते सूर्य के चरणों तक जा झुकती. नीम की पत्तियों के झुरमुट के पीछे कौंधती सद्यःजात रश्मियां वृत्ताकार सुनहलेपन को रचतीं. सहज आलोक से दर्पित सूर्य बड़े से थाल के रूप में क्षण-क्षण ऊपर चढ़ता. कृति को पता रहता कि सुनहली रश्मियों की यह कौपल पत्तियों के बीच से उनका सीधी रेखा


में पल-पल छिटकना, सूर्य के कल की नरम भंगिमा बस कुछ देर को सहने वाली है, फिर यह सारा कुछ लुप्त हो जाएगा, आम दिनों की तरह का एक दिवस परवान चढ़ेगा, जिसमें दूर आसमान की छाती पर सूर्य होगा. पेड़ों के झूंड चर्च के अहाते में मौन आवरण तले सिमटे हुए शान्त दिखेंगे.

सुबहें हर सुबह बीत जाया करतीं, उन्हीं में से कुछ सुबहों में थोड़े समय के लिए कृति किसी दिन और भोर के रू-ब-रू होती, वह सूर्य के अन्दर झांकने की सोच करती, उस पिघले हुए सुवर्ण वर्ण के पुरुष को देख पाने की चेष्टा करती जिसकी आँखों के बारे में गोपनीय कथ्य कहा-कहा जाता कि उनका रंग लाल कमल के पुष्प-सा है. उसकी इच्छा होती कि वह वहीं उसी लम्बी सड़क के पैरों के शुरुआती लम्हों पर टिककर खड़ी हो जाए.

बीचोंबीच दोनो हथेलियों को प्रणाम की मुद्रा में जोड़कर छाती के मध्य में टिका ले. दृष्टि के एक भाग को हृदय के मध्यतम बिन्दु पर रखे और दूसरे भाग को सूर्य के केंद्र पर अपनी उस वहीं चिकनी सड़क के बीचोंबीच खड़ी छोड़ कृतिका सुबह की सैर से लौट आती. ऐसे में उसके अन्दर की बलवती इच्छा जन्म लेती कि उसका अपना एक ऐसा घर हो, जहां के अहाते के बीचोंबीच कम से कम इतनी ही लम्बी सड़क हो जितनी लम्बी, गेट के बाहर है. वहां उस सड़क के बीचोंबीच यह उपासना मुद्रा में खड़ी रह सके, जब तक जी चाहे.

कृति अपने अंदर सूर्य के सामने खड़े होकर प्रार्थना कर पाने, प्रार्थना में डूब जाने की इच्छा को आकार लेते हुए देखती. उसके अन्तःकरण में निजी स्वप्नों का संसार जन्म लेता, उन स्वप्नों के बीच स्थित कल्पना में उसके अपने घर के पिछवाड़े के अहाते के पार अठखेलियां करता समुद्र हुआ करता, नीली छाती और श्वेत फेनिल लहरों के मुकुटों वाला समुद्र. कभी न थकने वाला समुद्र. उसके स्वप्नों में, सपनों का समुद्र रहा करता, कृति स्वप्नों के संसार के बीच आगे बढ़ना पसन्द करती.

यह उसकी, सिर्फ उसकी दुनिया थी जहाँ उसके सिवा किसी भी और का प्रवेश निषेध था.
अन्य पहाड़-पहाड़ियों के बीच स्थित किसी भी घाटी में गिरने वाली बारिश बड़े वेग से गिरती.
अपने प्रिय मौसम के बिना किसी खास रूटीन के बंधन में पड़े हुए खुलकर

पेज-40

भीगना कृति के मन की अन्दरूनी तहों में ताजगी के अनन्य बहाव की लहरें उकेर देता. वह बरामदे की सारी खिड़कियां खोल डालती और ठीक बीच में इंजी चेयर लेकर बैठक जातीं.
लम्हे, पल, मिनट, घंटे बीत जाते, वह बेसुध-सी बारिश को गिरते हुए देखती. मन का हर कतरा तरावटों के बीच गीलेपन की सलोनी सिहरनों को महसूसता. पपोट अकारण भारी हो उठते. सुख की, तृप्ति की महक उसके पूरे वजूद में फैल जाती.

वह दोनों बाँहें उठाकर सर के पीछे मोड़कर रख लेती. जुड़ी हुई, खुली हथेलियों पर सर को टिकाकर दूर बहुत दूर आसमान के बीचोंबीच देखती.

उसके जेहन में अन्तोनियोनी की की फिल्मों का आकाश आकारित हो उठता, वह अन्तोनियोनी के कैमरा संचालन पर अपनी याददाश्त के बीच मर मिटती. कृति बारिश की बूँदो को लंबी लकीर जैसी गिरने वाली धारों को और झिस्सी उड़ाती फुहारों से निर्मित तह को देखती. वह अपने मन प्राणों को इन लम्हो में सींच डालती. कभी-कभी वह उतरकर नीचे चली जाती, खुले आसमान से गिरती बूँदों को हथेली में जमा करती और उन्हें पी जाती.
सपाट उज्ज्वलता से लबालब भरा हुआ ताजगी के वलय सिरजने वाला अमृत स्वाद.
ऐसे में उसकी इच्छा होती वह दोनों बाँहों को ऊपर आसमान की ओर तानकर स्वयं को, देह को, मन को, प्राण को एक साथ एकबारगी महसूस करे.

विक्टरी के संकेत चिन्ह 'वी' को अपने और आकाश के बीचोंबीच निर्मित कर दे.

वह देखती कि पृथ्वी की त्रिज्या, व्यास और केन्द्रक को सीधी मिलाने वाली, आकाश की और उदग्र उठी हुई रेखा के संधि बिंदु पर खड़ी होकर वह स्वयं विक्टरी का संकेत चिन्ह बन गई है.
तृप्ति के क्षणों के बाद उगी हुई मुद्राओं की भंगिमा वहाँ भीगी हुई हवाओं के ऊपर उभर आती.

पेज-41

तने हुए पैरों और उठी हुई बाँहों से मिलजुलकर बनी हुई आकृतियों के बिम्ब वहाँ आसपास गडमड होने लगते-
"यहाँ ! इधर, देखो."
जयंत की भर्राई हुई कामना सूचित आवाज की गूँज की याद और उस गूँज से उठी ध्वनि की.....सन्नाटे की परत के ऊपर समान रूप से फैली हुई दिखतीं. कृति की नसों में कौंधता जादू आगे बढ़कर मानों पूरे वायुमंडल को अपने आगोश में ले लेता.

कृति के मन को डाँवाडोल छोड़कर बारिश अपनी बूँदों, बादलों और झकोरों समेत कुछ समय बाद अंतर्धान हो जाती. उन लैंडस्केपों के बीच कृति ठगी-सी खड़ी रह जाया करती.

मुस्कराती हुई मुद्राएँ आगे के घंटों में देर तक कृति के साथ चलतीं.

“बारिश के दिन में पुल का इंस्पेक्शन करने नहीं जाना चाहिए. आप साहब को बता दीजिए.”

डस्टिंग के दौरान जाधो का हाथ चलता, साथ-साथ मुँ भी. वह लगातार खबरें, जानकारियाँ देता जाता, कुछ न कुछ सुनाता ही जाता.
माँजी सुनना चाहती हैं या नहीं इस बात से जाधो का कोई मतलब नहीं रहता.

ज्यादातर तो कृतिका जाधो की ऐसी-ऐसी बतकहियों को ठीक से सुनती ही नहीं. वह पढ़ती रहती, सोफे के बैककवर को ठीक से रखती होती या शो पीसेज, फोटोफ्रेम को कायदे से सजा-सजाकर रखती. कभी पत्र लिखती रहती या फिर कुछ और सोचती बैठी रहती. बीच-बीच में हाँ हूँ कर देती.

साधारण बात होती तो कोई बात नहीं, लेकिन बात अगर किसी जरूरी पक्ष से संबंधित रहती, तो जाधो चिढ़ जाता-
“अभी बताने की बता देता है, बार में हाम फिर नहीं बताएगा. हाँ.”



पुल इंस्पेक्शन की बात के बारे में भी कृति को पूछना पड़ा-

“क्यों ? बारिश में क्यों नहीं करना चाहिए पुल इंस्पेक्शन ?”

जाधो की बतकही को मानों थोड़ी-सी चैरस जमीन मिली, जहाँ वह अगले दस-बीस मिनटों तक आलथी-पालथी मारकर कथावाचक बना रह सकता है. बात के लंबे-लंबे सूखों के एक रिसे को पकड़कर अनपे हिसाब से उन्हें ढील या छूट दे सकता है. उसने मानों किस्से के शुरूआती पक्ष को छुआ-

“बहुत साल नहीं हुआ फिर भी कितना ही दिन हो गिआ. सीकेपी डिवीजन में नया डीएन आया रहा-साइवाल.”
जाधो शैवाल नाम के डिवीजनल इंजीनियर की बात बताने जा रहा था.

“साइवाल साहब अइसा साहब रहा कि कभी, किसी भी समय उठकर इंस्पेक्शन में चला जाता. कभी सुबह चार बजे, कभी रात के ग्यारह बजे. उसका ट्रालीमैन बताता रहा कि अचानक साहब बोलेगा ट्राली ड्राइवर को बुलाओ, ट्राली निकालो और निकल जाएगा. कभी लोटापहाड़, कभी गोईलकेरा, जहाँ मर्जी हो वहीं चला जाएगा.
पीडब्ल्यूआई, मेट, गैंगवाला सबको परिसान करता रहा.”

“असल में माँ जी अइसा रहा कि...”
जाधो की आवाज कुछ इस तरह धीमी हुई कि कृतिका का मन जिज्ञासा से भर उठा.

“क्या बात थी बताओ.”

“बताता है, बताता है. अब हम तो जानता नहीं लेकिन बाकी सब कहता रहा बाद में एक बार अईसा हुआ कि...”
जाधो ने वाक्य को रहस्यमय ढंग से खुला छोड़ दिया.
कृति अचानक आशंकित हो उठी-


“उसके बाद में क्या ? क्या हुआ शैवाल साहब को.”

“वही, वही तो बताता है, सुनिए तो.”

अब जाकर जाधो के हाथ में उत्सुक आशंकित श्रोता के मन का सूत्र पकड़ाया था. इस समय को क्या वह ऐसे ही बीत जाने देगा ? वह तो अपना समय लेगा, आवाज के उतार-चढ़ाव को तौलेगा, उन चढ़ाई और घाटियों पर नाप-नापकर कदम रखेगा.
कृतिका ने तय कर लिया कि बस इस बार भर. अब आगे से न तो वह जाधो के वाग्जाल में फँसेगी, न ही उसके द्वारा कही गई एक भी बात का विश्वास करेगी.
“छोड़िये आपका मन नहीं है तो बाद में बोलेगा.”
माँजी को चुप देखकर जाधो ने अगला पैंतरा बदला.
कृति की इच्छा हुई कि अगर यह अपने घर जफरपुर का टेलवा नौकर रमुआ होता, तो ऐसी बात पर दीदी उसे एक थप्पड़ कसकर लगातीं.
“बताओ, मैं सुन रही हूँ.”

कृति ने मेम साहब का कवच अपने व्यक्तित्व के चारों ओर चढ़ा लिया.
अपनी ठंडी, शांत आवाज के पीछे उत्सुकता के बिम्बों को दब जाने दिया.

“असल में असली बात क्या रहा कि उस साइवाल साहब का मेम साहब उहाँ दिल्ली में नौकरी करता रहा. सादी के बाद इहाँ साहब के साथ आया तो साहब हर समय ड्यूटी में. मेमसाहब का दिल नहीं लगता रहा. झगड़ा भी हुआ. बाद में मेमसाहब बोला कि एतना छोटा जगह में उ रहेगा नहीं. बस उसी के बाद से साहब बेचैन हो गिआ. कोई तो चाहिए साथ में बातचीत करने को.”
जाधो ने आखिर बात पूरी की-
“मेमसाहब के जाने के बाद साहब तो बस हर दिन लाइन जाता रहा, स्टाफ को तंग करता रहा. खुद भी आराम नहीं करता रहा, न स्टाफ को चैन लेने देता रहा और

और बस पुल इंस्पेक्शन के समय गिर गिआ.''
'क्या sss !'
कृति के मन में मनोहरपुर, राऊरकेला जाने वाली लाइन उभरने लगी. हरे-भरे पहाड़, छोटी-बड़ी नदियां, देवसाल मंदिर के निकट स्थित पोसईटा की दूसरी सुरंग उस सुरंग से होकर तेज रफ्तार वाली गाड़ियां पूरे वनखंड को धड़काते हुए गुजर जाती. सुरंगों के बनने के समय घटी घटनाएं, कहानियों का बाना पहने गांव वालों के संग मुसाफिरों तक चली आया करती और टनेल के साथ गुजरने वाली लाइन के घूमकर जाने का रहस्य उजागर कर देती. जब अंग्रेज इंजीनियर वहां टनेल बनाने आए थे तो उन्हें नहीं पता था कि जमीन के अन्दर पता नहीं कितने कालखंडों में देवता सोए पड़े थे. झारखंडी महादेव, सुरंग बचाने के दौरान हलचलों का सिलसिला जारी हुआ. देवता जाग पड़े और अचानक उस वीराने में एक जागत देवता उग आया. इच्छाओं-आकांक्षाओं से भरी प्रार्थनाएं जाग उठीं.

वहाँ बिछी पटरियों पर पूरे साल महादेव की छाप छाई रहती. ट्रेन की खिड़की से रात में रोशनियों तले जगमगाते मंदिर को कृति देखती. उसके मन में गर्भगृह में स्थित शिवलिंग की स्मृति, काले ठंडे पत्थर के बीच से निकलकर छा जाती. घने जंगल के बीच खड़े विशाल वृक्षों की फुजगियों पर शिव की अद्भुत आकृति बादल सरीखी मंडरा उठतीं. वनवासी का वेश धारण किए शिव गांव वालों के मन में बसते. दूर जंगल में स्थिर गांव के लोग ट्रेन में बैठकर खलासी बनने कस्बे में आ जाते. वे खलासी बन भी जाते. वे गैता-कुदाली चलाते, पटरियों पर लगी लोहे की बाभियों को कसने का काम करते. वे लोग चैकीदारी का भी काम करते. नई सभ्यता से परिचित होने के दौर में उनके लिबास बदल जाते. उनकी स्त्रियां ब्लाउज को आश्चर्य से देखतीं.

रेल डिवीजन में सीकेपी कस्बे के छोर पर बनी काॅलोनी वास्तव में किसी भी तरह से अफसरों की सकारात्मक रिहाइशी कालोनी नहीं दिखती. यूं तो बाहर से सब ठीक-ठाक दिखता, बड़े-बड़े बंगले 'बंगलों' के बीच स्थित क्लब की इमारत, लेकिन बीच के वर्षों में आॅफिसर्स काॅलोनी के ठीक सामने सड़क के उस तरफ बसा दी गई स्टाफ कालोनी आक्रोशित ढंग से इस पार की हलचलों पर नजर रखती. जानबूझ कर फैलाई गई हिंसा की लहरें बंगलों की छतों पर कुहासे की शक्ल में फैली रहती.

खास प्रकार से निर्मित यह हिंसा, यूनियन और प्रशासन दोनों के द्वारा रची गई निर्धूम शिखा की नाई तपती.


अनदेखे स्वार्थों की अनवरत आपूर्ति की खातिर मानसिक हिंसा का यह दीप बरसों-बरस लगातार जला करता. यूनियनबाजी और प्रशासन दोनों के द्वारा मिलकर रची गई इस हिंसा को अखंडित दीप की तरह बराबर पुज्ज्वलित रखा जाता, किन्हीं अनदेखे स्वार्थों की अनवरत आपूर्ति की तरह. जब कृति देखती कि बोर्ड से निकलने वाली पत्रिका में मिनिस्टर की फोटो छपी है लाभांश के लाख-लाख रुपयों के चेक को स्वीकारते हुए तो वह चैंक जाती. यदि वाकई रेल्वे मुनाफा कमाने में समर्थ है, तो वह जीवन भर समर्पणपूर्वक खटने वाले अपने कर्मचारियों का, उनके परिवारों का ध्यान क्यों नहीं रखती ?

ये प्रश्न कृतिका की स्टडी टेबल के चारों ओर मंडराने लगते.

कृतिका को यह पूरा ढांचा किसी बेहद विशाल गगनचुम्बी इमारत जैसा दिखता जिसके गुम्बद रूपी ऊँचे शीर्ष पर स्थित एकमात्र कुर्सी सीआनबी की रहती. उस ऊँचे शीर्ष के ठीक नीचे कुछेक गिनी-चुनी हस्तियां होती. रेल्वे बोर्ड के तमाम मेम्बराज अपना-अपना तामझाम समेटे हुए.

अन्य बुर्जियों पर अलग-अलग जोन के जनरल मैनेजर अवस्थित होते, उनका राज्य, उनके अपने मातहतों, चीफ आफिसरों से लेकर पूरे हेडक्वार्टर औरा डिवीजन तक फैला रहता और डीआरएम हर डिवीजन के शीर्ष पर स्थित मालिक की तरह दिखता. मालिक की मर्जी के बगैर डिवीजन में पत्ता भी नहीं हिला करता.

इस विस्तृत ऊँचे में हर जगह, हर अफसर के नीचे फ्लौर ओवरसियर, बतौर क्लर्क और खलासी काम करने वाले कर्मचारियों का एक-एक झंुड रहता, कई अफसर अपने नीचे स्थित कर्मचारियों के
झूंडों की गिनती करके अपने पावर पर इतराया करते, इतने बड़े रेल प्रशासन में कई लोग सीधे-सीधे बतौर असिस्टेंट इंजीनियर अपनी पोस्टिंग पर आते. कायदे से वे विस्तृत संरचना के छोटे प्यादे होते. लेकिन होमाफैसी, डूंमरगड़, टिटलागढ़ और अराकू जैसी छोटी जगहों पर, जहां वे उस कालोनी के एकमात्र अफसर हुआ करते, उन्हें प्रशासन एक अलग तरह के सिंहासन पर आसीन करा देता. वे उस स्टाफ कालोनी के मानो राजा हुआ करते, पूरी कालोनी हर पल अपने एईएन पर निगाहें जमाए रखती. साहब की निगहबानी में बने रहना चाहती.

ऐसे में साहब की पत्नी भी अपनी अहम भूमिका रखती, कृतिका को उसकी जिम्मेदारियों से परिचित कराने कई बार स्टाफ की महिलाएं आ जातीं. कभी आफिस


के बड़े बाबू, राव की पत्नी के साथ लैडी क्लर्क, कभी कोई और-

‘पहले यहाँ महिला समिति था,’

कृतिका ने जिन्दगी में पहली बार महिला समिति का नाम सुना. कर्मचारियों की पत्नियों उपार्जन में सक्षम बनाने वाली अद्भुत समाजसेवी संस्था.
हर डिवीजन, हर छोटी-बड़ी रेल कालोनी में अवस्थित महिला समिति की विभिन्न शाखाओं में कर्मचारियों के कपड़ों की सिलाई की जाती. कमीज, पैंट, कोट के कटे हुए टुकड़े गिन-गिनकर महिलाओं को दिये जाते और एक-दो महीने के बाद उनसे पूरी सिली हुई कमीज, पैंट गिनकर ले ली जाती, बदले में सिलाई की रकम मिलती. हर महिला की अपनी स्वतंत्र कमाई, स्त्री के स्वयं का उपार्जन. कृतिका उस ढांचे से अवगत होते ही डोंगाधोसी में उसकी शाखा खोलने के लिए उत्सुक हो उठी.

यह एक समाजसेवा का काम था. समाजसेवा से बिना गहराई तक जुड़े हुए कृतिका ने अपने आप महिला समिति के काम को हाथ में ले लिया. स्टाफ कालोनी की अन्दरूनी पाॅलिटिक्स की छिपी परतों को कई बार उघाड़कर उसे इशारों में बताया गया कि पहले भी कभी यहाँ समिति खुली थी, लेकिन बाद में आपसी लालच और झगड़े के कारण बंद हो गई, घपला हो गया था.
‘अभी भी समिति का मशीन बच्चन बाबू के घर में है. वह आदमी अईसा है कि मशीन लौटाएगा नहीं.’

तरह-तरह की बातों के सुनते हुए, गुनते हुए कृतिका को यह तो समझ में आया कि यह एक उलझा हुआ मुश्किल-सा काम है जिसमें गड़बड़ियाँ और गड़बड़झाले की पूरी संभावना है. लेकिन कृतिका के न ने इस बात से इंकार नहीं किया कि उसके द्वारा उठाए गए कदम से, जबरदस्ती मोल ली गई परेशानियों से, उन स्त्रियों का भला होगा जिनकी आँखों में झलकती विनती के कलरों ने कृति को आत्मसंकल्प से भर दिया था.

'आप यहाँ महिला समिति खोलिए न, हम लोगों को कुछ पैसा मिल जाएगा.'

'त्यौहार के समय तीन-चार सौ रुपये हाथ में आ जाएं तो हम अपने लिए, बच्चों


के लिये कुछ खरीद सकता है.'
कृतिका ने तय कर लिया कि उसे महिला समिति खोलनी ही है.

वेलफेयर इंस्पेक्टर को वहाँ जाॅन्गापोसी बुलाना एक मुश्किल-सा काम था. यह बात एक समस्या की तरह सतह पर उभरी, फोन कर-कर के तंग आ चुके बड़े बाबू ने सलाह दी-
"मैडम! एक बार आप डीआरएस मैमसाहब से बात कर लेतीं."

डीआरएस कितना बड़ा अफसर होता है, सच में कृतिका को यह पता नहीं था. मन में धुधली तस्वीर आई और गई- "भाई से थोड़ा बड़ा."
भाई तब डोयरपुर में डिप्टी थे.

कृतिका ने बिना संकोच के डीआरएम मैडम को फोन किया. ठीक पाँचवे दिन वेलफेयर इंस्पेटक्र अपनी लंबी नाक और चमड़े के हैंडबैग के साथ आया-

"महिला समिति का कमरा कहाँ है ?"

महिला समिति के नाम पर एक फुट जगह भी तय नहीं थी और इस्पेक्टर कमरे की बात पूछ रहा था.
'कपड़ों के बोरे कहाँ रखे जाएंगे?'

इस समस्या का समाधान नहीं था.
महिला समिति के लिए उस कालोनी में कहीं तयशुदा सुरक्षित जगह नहीं थी.

कृतिका ने अपने बंगले के बरामदे में कपड़ों से भरे बोरों को रखवाने का निर्णय लिया.
'...त्यौहार के समय हम लोगों को थोड़ा पैसा मिल जाएगा...'

कृतिका महिला समिति किसी भी कीमत पर खोलेगी जरूर.
वास्तव में समिति को खोलना, मीटिंग की तारीख तय करना, मेम्बरों का चुनाव करके उनके बीच से सेक्रेटरी आदि को चुनकर उसे काम सौंपना एक लम्बे सिलसिले की तरह था. कृतिका ने एक-एक कदम सोच समझकर ही नहीं, बल्कि फूंक-फूंककर रखा. जो लोग पहली महिला समिति के सदस्य थे, उनमें से एक को भी नई महिला समिति में सदस्यता नहीं दी गई. कृतिका हर काम को स्वयं करने की कोशिश करतीं, लेकिन उसके द्वारा लिए गई निर्णयों के पीछे जयन्त के आफिस स्टाफ के कई लोगों का दिमाग रहता और समय-समय पर दी गई चेतावनियां रहतीं. उन सभी चेतावनियों और सलाहों पर कृतिका गौर करती, फिर कोई भी निर्णय लेती.

कुछ महीनों में महिला समिति ने रफ्तार पकड़ ली.

मेम्बरों को गिनकर कटे हुए कपड़े दिए गए, दो महीने बाद सिली हुई कमीज, पैंट वापस गिनकर लिए गए. तयौहार के पहले पैसे भी बाँटे गए.

अपनी मेहनत का अपना फल.

पाँचवे महीने की मीटिंग के दौरान अचानक तय हुआ कि एक मेला लगाना है- आनन्द मेला, इंस्टीटयूट के मेन हाल में हुई इस मीटिंग में सेक्रेटरी, ज्वायंट सेक्रेटरी के साथ-साथ तमाम मेम्बरों की उपस्थिति में यही निश्चित किया गया कि अगले महीने आनन्द मेला लगाया जाए-
दही बड़े, केक, मेवड़ा भाजा से लेकर पकौड़ी-चाय के स्टालों वाला मेला.

मेले में और भी कई स्टालों का रखा आना तय हुआ. गेम्स और गैम्बलिंग स्टाल.
इस मेले से कृतिका को क्या हासिल होने वाला था इस बात पर बिना विचार किए हुए वह मेले को लगवाने की तैयारियों में व्यस्त हो गई.
अपने हिस्से के खाली समय का बहुत-सा हिस्सा खुशी-खुशी स्टाफ की खुशियों के बदले में देने के लिए कृतिका तैयार हो गई, मानो यह उसका एक जरूरी कर्तव्य हो.


स्टाफ की पत्नियों के उत्साह, उनकी खुशी का सम्मान करना कृतिका को किसी ने सिखाया नहीं था लेकिन सकारात्मक वलयों के बीच स्वयं को अवस्थित रखने की आदत के तहत कृतिका ने स्वयं को इस बहाव में बह जाने दिया. अनजाने ही वह इस कार्य में पूरे मन से जुड़ गई.

खुद-ब-खुद कृतिका एक अच्छे कार्य में भागीदार बनने जा रही थी.

नियत दिन और तयशुदा समय पर आनन्द मेला लगा.
खाने-पीने के स्टाल के साथ-साथ बैलून और छोटे-मोटे खिलौने के स्टाल भी लगे, एक-दो गैम्बलिंग स्टाल भी, पानी भरी बाल्टी में रखी कोल्ड ड्रिंक की बोतलों में रिंग डालने का स्टाल और ताश के पत्तों से भाग्य आजमाने का स्टाल.

लेकिन मेरे के शुरू होने के दूसरे-तीसरे घण्टे में ही ऐसी भीड़ उमड़ी कि खाने-पीने के सभी सामान बिक गए. खाली बर्तन को सामने रखे स्टाल पर बैठे रहना महिलाओं के लिये खतरे से भरा था. नए-नए आते ग्राहकों की नाराजगी का डर था.

कृति ने तुरंत निर्णय लिया.
“दस मिनट के अंदर आप लोग स्टाल छोड़ दें.”

ठीक पन्द्रहवें मिनट में वह मेले को छोड़कर निकल गई. कृति को कालेज में सामने वाले वसन्त मेले में रखे रह गए, खाली भरे भगोने याद आए. उस साल फरवरी महीने में आयोजित मेले में इंटर में पढ़ने वाली कृतिका थर्ड ईयर की विजया राव के साथ इडली के स्टाल पर थी.

जफरपुर जैसे छोटे शहर में इडली का नाम तब नया-नया था और उसका स्वाद ज्यादातर लोगों के लिए अनजाना.
विजया राव के साथ कृति मेन हाल में लगाए गए स्टाल पर चटनी, सांभर, इडली के साथ काफी समय तक ग्राहकों के इंतजार में खड़ी रही थी. तमाम लड़कियां, उनकी माएं, भाई, भाभी, पापा, चाचा आते रहे. अगल-बगल के स्टाल से पकौड़े-समोसे, चाट खरीदते रहे. सामने लगी दस टेबलें और चालीस कुर्सियां रह-रहकर भरतीं और खाली होती रहीं, लेकिन विजया राव के स्टाल की इडली जैसी की तैसी रही.


मेला शाम के साथ बजे खत्म होना था. जब घड़ी की सूईं ने पांच पार किए तो विजया रुआंसी हो उठी थी-
“हमारा मम्मी हमको बहोत डांटेगा.”

उसने टेबल के नीचे रखे भगौनों की ओर दुःखी होकर देखा था.

कृति को विजया राव के सफेद लंबे कुर्ते और चमकदार दुपट्टे की याद आई. काली पुतलियों से मेल खाते काले बाल.
कितनी-कितनी दुनिया पीछे छूट गई है और कैसी-कैसी दुनिया आगे पसरी पड़ी है.
कृति इन सबके बीचों-बीच खड़ी है मानो पृथ्वी के ठीक शीर्ष पर दोनों हाथ पृथ्वी के समानांतर फैलाकर वायु के जोर को भांपती हुई बैडमिंटन कोर्ट के सामने खड़े होकर कृतिका ने पूरे परिवेश को एक साथ देखा.

सामने फेसिंग के पास रेलवे लाइन.

दाहिनी ओर बंगला और आफिस की जुड़ी हुई इमारत. बंगले के बाहरी बरामदे में लगे दरवाजे को खोलकर जयन्त सीधे आफिस के बरामदे में प्रविष्ट हो जाते और वहीं से आगे बढ़कर अपने आफिस में.
आनन्द मेले के दूसरे दिन से लेकर पूरे सप्ताह तक डोंगापोसी में तरह-तरह की रिपोटिंग चली. बंगले से लेकर आफिस तक, माल रोड से लेकर स्टेशन तक.

“बहुत लोग शाम होने पर मेला में गिआ, वहाँ तो कुछ खाने का सामान बचा ही नहीं था. सब लौटकर आ गिआ, खूब गुस्सा होता रहा, बोलता रहा कि ओह थोड़ा पहले जाने से ठीक रहता.”

नए प्रश्न उभरकर जगह रोक लेते-
“अगला मेला कब लगेगा मां जी ?”

पेज-51

समिति की महिलाओं के आनन्दित चेहरों को, उनके चमचमाते मुखड़ों पर छाए उत्साह को देखकर कृतिका ने अगाध संतोष महसूस किया.
“हम लोग कभी भी ऐसा मेला नहीं देखा.”
“यहाँ कभी मेला लगा ही नहीं था.”
“की लोक्खी मां ई मेमसाहब तो.”

मिसेज गांगुली के साथ गांव से आई उनकी बड़े जेठानी ने कृतिका की अपने ढंग से प्रशंसा की.
“मैडम, हम बोल देता है अईसा मेला इधर न पहले हुआ न आगे कभी होगा ‘क्रेडिट गोज टू यू.”

आॅफिस से साउथ इंडियन बड़े बाबू अपनी पत्नी समेत धन्यवाद ज्ञापित करने आए.
कृतिका ने जीवन के नए अध्याय के कुछ पन्ने पूरी कुशलतापूर्वक पलट डाले.

मीटिंग के लिए जयन्त जब डिवीजन जाते, तो कृति भी साथ जाया करती. वहां दो-तीन दिन रहने के दौरान किसी न किसी के यहाँ नाश्ते, खाने पर उन्हें बुलाया जाता. रेल समाज के समृद्ध तौर-तरीके कई बार जयंत फोन करके स्वयं भी किसी के घर मिलने चले जाते.

उस शाम जयंत ने डीईएन सत्यनाथन के यहाँ जाने का प्रोग्राम बनाया. कृति और जयंत साढ़ सात बजे सत्यनाथन दम्पति के घर गए.

कृति ने पाया कि मिस्टर-मिसेज दोनों ने एकदम अच्छे क्रीजदार कपड़े पहने हुए थे. उन पर लोगों के सलीके को देखकर एकदम से प्रभावित हो गई और मन ही मन उसने उन लोगों के रहन-सहन की तारीफ की. गप्पें हुईं, चाय, बिस्किट और सेब खाए गए.
मिनी कोर्ट स्थित उस सजे-सजाए फ्लैट में कृति सोफों के बीच रखी गई एकदम बौनी आरामदेह कुर्सी पर बैठी थी. बैठते समय कृति ने ध्यान नहीं दिया था कि उस

पेज-52
कुर्सी का रुख सीधा अंदर के कमरे में खुलने वाले दरवाजे की ओर है.
गपशप के बीच उसने देखा कि अंदर के कमरे के फर्श पर दो बच्चे पेट के बल लेटे हुए थे. दरवाजे पर लगे पर्दे की लंबाई के कारण वे दोनों बाकी लोगों की नज़रों से छिपे हुए थे, लेकिन कृति को वे साफ-साफ दिख रहे थे.

वह उनकी ओर देखकर मुस्कुराई, लेकिन वे नहीं मुस्कुराए. उन्होंने लम्बी जीभ निकालकर उसे मुँह चिढ़ाया और मुक्के दिखाए.

कृति की मुस्कुराहट अपने आप लुप्त हो गई. उसने घबड़ाकर आश्चर्य से जयन्त और मिस्टर मिरोज सतयनाथन की ओर देखा, वे लोग बातों में मग्न थे, कृतिका ने अंदर कमरे में खुलने वाले दरवाजे की तरफ से निगाहें हटा लीं, उसने सोचा उधर देखना ठीक नहीं, लेकिन थोड़ी देर बाद उसने पाया कि निगाह अपने आप उधर चली गई. नजर मिलते ही फिर बच्चों ने मुक्के दिखाए. दाँत निकालकर बन्दरों की तरह 'हाऊँ-हाऊँ' की मुद्रा बनाई.

कृतिका ने फिर से घबड़ाकर नजरें हटा ली.

अब तो यही बार-बार होने लगा, वह अंदर के कमरे में खुलने वाले दरवाजे पर से निगाहें हटा लेती. कुछ देर बाद अचानक जैसे ही नजर जाती, बच्चे हवा में मुक्के लहराते हुए दिख पड़ते, तभी फोन की घंटी बजी. मिसेज सत्यनाथन ने फोन उठाया-
"यस! हाँ, हाँ कुछ देर में निकल रहे हैं."

कृतिका को एकदम से समझ में आ गया, वे लोग सपरिवार किसी से मिलने जा रहे थे और जयन्त कृति के आ जाने के कारण उनके प्रोग्राम में खलल पड़ी. इसीलिए बच्चे चिढ़े-चिढ़े हुए थे. कृति ने जयन्त को वापस चलने का इशारा किया. जयन्त कुछ ही मिनटों में उठ खड़े हुए-
"अच्छा बाॅस, हम चलें"
"ओ.के. पार्टनर, कम अगेन."

कृति ने चैन की सांस ली.
छह शानदार बंगलेनुमा फ्लैटों वाले उस 'मिनी कोर्ट' से बाहर निकलते हुए कृतिका ने


मुड़कर एक बार पूरी बिल्डिंग को देखा, अलग-अलग फ्लैटों की बत्तियां यहाँ-वहाँ जल रही थी. छह परिवार एक साथ एक बिल्डिंग में 'आज यहाँ कल कहीं और' की मुद्रा में रह रहे थे.

कृतिका ने अलग कमरों में रहने वाले परिवारों के बच्चों के बचपने के उन कतरों के बारे में सोचा, जो शायद भविष्य में वही उन दीवारों पर छूट जाने वाले थे. उनकी शरारतें, उनके द्वारा छिपाए गए बैलून और रंग-बिरंगे पत्थरों के टुकड़े इन्हीं फ्लैटों में, नीचे के बगीचे की मिट्टी के अंदर, छुपे रह जाएंगे. पिता के ट्रान्सफर आर्डर आने पर वे कहीं और किसी अन्य शहर में रहने चले जाएंगे. बड़े होने पर इन्हीं कमरो में रहने वाले बच्चे अपने बचपन की यादों को ढूंढते हुए शायद कभी वापस मिनी कोर्ट आना चाहें.

वे पीछे छूट गए अतीत के उस बंगलेनुमा फ्लैट में मात्र उस जगह को एक बार फिर से देखने जाना चाहें और पुराने शहर पहुंचकर वे मिनी कोर्ट आएं, जब वे घंटी बजाएं तो स्वयं को किसी अनजान अपरिचित चेहरे के रू-ब-रू खड़ा पाएं-

“यस ?”
“एक्सक्यूज मी! कई वष पहले हम लोग यहाँ इसी घर में रहते थे.”
“ आय सी!”
“ ऐसा है कि बरसों बाद अचानक इधर आना हुआ तो हमने सोचा पुराने घर को देखने चलें.”
“ओ s ! आ जाओ, अंदर आ जाओ.”

हिचकते कदमों से बचपन से बड़ा हुआ, बच्चा अंदर आ जाए-
“एक्सक्यूज मी! मैं शायद आप लोगों को डिस्टर्ब कर रहा हूँ.”
“नहीं, नहीं. इट्स आॅल राइट.”

ट्रान्सफर पर जाते रहने वाले अफसरांे के लिए बनाए गए बंगलों और फ्लैटों को देखते


हुए कृतिका अक्सर साचा करती कि उनमें रहने वाले व्यक्ति यदि भविष्य में मौका मिलने पर एक बार फिर पुराने घर को देखने आना चाहें और यदि ऐसा हुआ कि वे सभी एक ही दिन, एक ही समय में आ गए तो ?

‘मिनी कोर्ट’ के अहाते से बाहर निकलते हुए कृतिका ने मुड़कर एक बार पीछे देखा, शानदार बिल्डिंग की खिड़कियों के शीशे अपनी पलकें, पर्दों की हिलती सलवटों के संग झपका रहे थे.

कृति ने पीछे मुड़कर शीशों के चैकोर टुकड़ों को ध्यानपूर्वक देखने की चेष्टा की, मिनी कोर्ट के शानदार फ्लैटों में रह चुके कितने ही अफसरों के बारे में कृति ने एक साथ सोचा जो वहाँ अलग-अलग समयों में रहे होंगे. अकेले भी दुकेले भी. तय है उन सबों के व्यक्तित्व का कोई-न-कोई हिस्सा अलग-अलग समय खंडों में उन कमरों के शानदार स्पेस के बीच अवश्य छूटा होगा. ‘घटाकाश’ के बीच. क्या पीछे छूट चुके अपने व्यक्तित्व के उस हिस्से को तलाशते हुए ये सब फिर कभी सच में मिनी कोर्ट वापस आएंगे? आना चाहेंगे ? यानी स्वयं के किसी अंश को तलाशते हुए ? सब के सब एक साथ, एक ही दिन ?

कृति ने काॅलोनी की चिकनी काली सड़क पर चलते हुए सोचा.

शाम ढल चुकी थी. बिजली के खम्भे सिर पर रोशनी के वृत्त समेटे कतार में खड़े थे, उन रौशन कतारों के बीच चलते हुए कृति को यकायक उस नर्म-नर्म दुपहरी की याद आ गयी, जिसमें ट्रांसफर, घर छोड़ने, नए घर में शिफ्ट होने की चर्चा जमकर हुई थी.

एक सौ छह नम्बर के बंगले में स्थित हरे घास के गलीचेनुमा लाॅन के एकदम किनारे ही टी टेबल लगायी गयी थी. अर्जुन का पुराना पेड़ अपने मोटे तने की तिकोनी भंगिमा के संग निकट ही खड़ा था और दुपहरिया के बीतते कदमों तले लाॅन के सिर पर स्थित मऊआ का पेड़ अपनी पत्तियां झुकाए हुए...
“रचना, फिर से उसी डिवीजन में आना कैसा लग रहा है ?”
मिसेज चन्द्रवल्ली ने नए-नए प्रोमोट हुए रोगेश मिश्रा की पत्नी से पूछा था-
“हाँ, अभी आए तो हैं, लेकिन पता है कि फिर जाना पड़ेगा.”

वह एक तरह का निरपेक्ष स्वीकार था, वक्त को स्वीकारने जैसा.

पेज-55

ट्रान्सफर को परिवार सहित स्वीकारने की बात ने उस समय उपस्थित सभी महिलाओं को अपनी तुर्श छुअन से टहोका-सा लगाया था, सब के पास अपना-अपना दर्द था...लगे लगाए बगीचे को पुरानी जगह छोड़ जाने का दुःख, लगाए गए नींबू की डालों पर लदे अनगिनत कच्चे नींबुओं को पुराने बगीचे में छोड़कर आने का दुःख... सबके पास बिताए गए, सालों में भोगे गए यथार्थ के लम्बे लम्बे टुकड़े थे, लेकिन रचना मिश्रा सथूल आवागमन की बात नहीं कर रहीं थी.

कृति ने ध्यान से मिसेस रचना मिश्रा के कपाल को निहारा था, वहाँ अशर्फी जैसी गोलाई थी, क्या रचना मिश्रा जन्म-मृत्यु से संबंधित आवाजाही को इंगित करना चाह रही थी ? या पूर्व जन्म में उपस्थित वैदिक संस्कारों के कारण वह स्वीकार, अनजाने ही उसकी वाणी पर आकर बैठ गया था ? रचना मिश्रा की आँखों में स्थित शून्यता चैंका देने वाली थी.

वह बोलती तो ऐसा लगता मानो शब्द आकार ले लेते हैं, लेकिन उनके अंदर कोई गूंज नहीं रहा करती, पूरे समय उसकी दृष्टि एकदम निराकार रहा करती.

उस दुपहरी में रचना ने उपनिषद के बारे में बताया था. उसके मुँह से निकले निराकारी वाक्य अचानक अमूर्तता से निकलकर मूर्त हो उठे थे-
“मुझे तो ऐसा लगता है कि अपने ट्रांसफर को हमें अद्वैतिक प्रस्थान की तरह लेना चाहिए. बंगले के कमरों को अपना मानकर रह रहे हैं, सारी कॉलोनी पूरा क्लब, स्वीमिंग पूल सब अपना लगता है. लगता है कि यह सब हमारा है, लेकिन अचानक आर्डर आ जाते हैं और हम दूसरे शहर को चल पड़ते हैं, जैसे जीव एक शरीर को छोड़कर एक लोक से दूसरे लोक जाते हैं.”

कृति को पंचाग्नि विद्या में वर्णित तथ्य उस दिन याद आ गए थे....
...पूरी मनुष्य जाति सभी जीवनधारियों को ‘प्रजा’ शब्द से इंगित करने वाले राजा के बारे में उसने सोचा. प्रवाहण नामक राजा वास्तव में कैसा रहा होगा ? क्या वह वाकई चैतन्य को उसके सह स्वरूप में जाने वाला रहा होगा ? कृति को राजाओं के उस राजा का राजसी बिम्ब, राजदर्प, ज्ञानदर्प की पूर्णतः पर दृढ़तापूर्वक खड़ा हुआ नजर आया.

उस शाम कृति ने युगों पहले बीते हुए समय में स्थापित राज्य की कॉलोनी की शांतता के बीच काँपते हुए महसूस किया था. कौंधते हुए सभी सत्यों के बीच से कृति ने स्वयं को देखा.

पेज-56

कृति इन सबके बीचोंबीच खड़ी है मानो पृथ्वी के ठीक शीर्ष पर दोनो हाथ पृथ्वी के समान्तर फैलाकर वायु के जोर को भांपती हुई.
बैडमिंटन कोर्ट के सामने खड़े होकर कृतिका ने पूरे परिवेश को एक साथ देखा.

सामने फेसिंग के पार रेलवे लाइन.
दाहिनी ओर बंगला और आॅफिस की जुड़ी हुई इमारत, बंगले के बाहरी बरामदे में लगे दरवाजे को खोलकर

जयन्त सीधे आॅफिस के बरामदे में प्रविष्ट हो जाते और वहीं से आगे बढ़कर अपने आॅफिस में.
बारिश बीत रही थी.

पहाड़ी पर पहाड़ों पर बरसात गिर रही थी.

लाइन के पार खड़े पहाड़ गहरी बारिश के बीच नीलेपन की छाया तले घिरे दिखते. पूरी काॅलोनी उन पहाड़ों के पैरों तले बिछी हुई.

नोआमंुडी के सबसे ऊंचे टावर पर खड़े होने से दूर-दूर तक पहाड़ों की कतार पर कतार दिखती. कृति उन्हें गिनना चाहती. वे पहाड़ फैलते-फैलते उड़ीसा की सीमा को छू लेते, छू कर क्षितिज की गोलाई की ओर मुड़ जाते. धूप की नर्म तह पीली सुनहरी होकर पूरे वातावरण पर प्रतिबिम्बित हो उठती. शाम अपनी बांहों का घेरा और बढ़ाती. वह सारी रश्मियों को, परावर्तन के जादू को, पहाड़ों-घाटियों के ओर छोर को ढंक लेना चाहती.
सुनहरी शामों का जादू देर तक कृतिका के मानस को ढाँपे रखता.

पढ़ी हुई कुछ कविताओं को इस मौसम में कृति बार-बार पढ़ती, पढ़ी हुई पंक्तियों की गूँज आसपास मँडराती चलती...
'हेन आय रिकाल दैट आॅ दिस-मायसेल्फ, स्टारस्, फ्लाॅवरस् एंड द शार्प फ्लाइट आॅफ अ बर्ड आउट आॅफ गेस्थरिंग बशबुड, द क्लाउड्स हाउटिनेस एंड व्हाट् द विन्ड कुड डु टू मी एट नाईट. व्हीस्किंग मी आउट आॅफ वन बीईंग इन्टू अ नेवस्ट- दैट आॅफ दिस इन एन्डलेस सवसेशन.'

---